**eISSN 2581-8996**
[Date]
**THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)**
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 1, Issue 01, Jan 2018

# अज्ञेय की रचना प्रक्रिया : एक अनुशीलन

**[1]डॉ0 अवधेश कुमार शुक्ला**
[1]सह प्रोफेसर हिन्दी, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिन्दकी, फतेहपुर उ0प्र0

Received: 01 Jan 2018, Accepted: 15 Jan 2018 ; Published on line: 31 Jan 2018

## Abstract

किसी भी साहित्यकार की रचना उसकी अनुभूति का ऐसा रूप है, जो उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनकर सृष्टि कराती है। विविध आयामी साहित्यकर सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्वायन 'अज्ञेय' की रचना प्रक्रिया प्रतिभा की अपेक्षा यान्त्रिकता को अधिक महत्व देती है। आनन्द प्रकाश दीक्षित के अनुसार 'कला के भावत्मक और रचना पक्ष को सर्जक और ग्रहीता के पारस्परिक संवाद की समस्या के रूप ग्रहण करके चले है। इसीलिए उनके सामने रचनाकार का व्यक्तिव उसकी अन्तरचेतना और समाज के साथ उसके सम्बन्ध का द्वन्द्व निरन्तर बना रहा है। बल्कि उनका सारा प्रवत्न इन्हीं दो द्वन्द्व की समस्या सुलझाने का रहा है। वही उनकी सारी विवेचना को भी। किन्तु रचना प्रक्रिया के सन्दर्भ में रचियता के आन्तरिक तनाव निरन्तर घटित होने वाले संस्कार परिष्कार और भावों एवं अनुभवों आदि के आन्तरिक संगठन को उन्होंने जिस रूप में ग्रहण किया, उसमें उनकें नये प्रस्थान की सूचना भी मिली।'

**मुख्य शब्दावली–** अज्ञेय की रचना प्रक्रिया, द्वन्द्व, संस्कार परिष्कार और भाव एवं अनुभव।

## प्रस्तावनाः

अज्ञेय के शब्दों में रचियता का महत्व रचना करनें की तीव्रता में है और कविता की कलावस्तु की श्रेष्ठता उसमें वर्णित विषय की या भाव की श्रेष्ठता या भव्यता में नहीं है और लेखक के लिए उन विषयों या भावों के महत्व में या उसके जीवन में उनकी व्यक्तिगत अनुभूति में बिल्कुल नहीं है। कविता की कला वस्तु का गौरव उसकी भव्यता है। उस रासयनिक प्रक्रिया की तीव्रता में जिसके द्वारा वे विभिन्न भाव एक होते है और चमत्कार उत्पन्न करते है। वे मानते है कि सर्जक उन क्षणों की प्रतीक्षा करता है, जब अपने आप आयेगा ऐसा विचार, जो मेरी पकड़ के लिए होगा ऐसा विचार जिसमें मै सबका सब अट जाऊॅगा, कह दिया जा सकूॅगा–मेरी कामधेनु जो मुझे मेरा सम्पूर्ण मेरापन वर्दान सा

**eISSN 2581-8996**
[Date]
**THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)**
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 1, Issue 01, Jan 2018

दे देगी, मुझे देगी, मुझे बॉटनें लुटानें देगी और जिसके बाद भी मै सम्पूर्ण बच जाऊॅगा और बचा रहूॅगा।

वस्तुतः अज्ञेय की रचना प्रक्रिया को एकयन्त्रणा भरी कष्टमय प्रक्रिया मानते है। उनका मन्तव्य है कि सर्जक प्रतिभा निरन्तर चयन भी करती रहती है। अनुभूतियों अनुभावों का, विचारों कल्पनाओं का, शब्दों ध्वनियों अर्थो अभिप्रायों का, जिन सबको कूट–पीस, हटान–सान–जला–पका कर वह कभी कला रूप की सृष्टि करेगी। एक दूसरे स्तर पर कितना सार्थक उभयार्थवाची शब्द है चिति। यह विचिन्वन ही अग्निचयन भी है, वही यज्ञ हुताशन जिसमें स्रष्टा स्वयं निरन्तर आहूति सा स्वाहा होता रहता है। ऐसा अग्नि–स्नान कवि पुरूष ही वह हविश्य बांट सकता है, जो ईष्टिपूर्तियों का प्रतीक हो।

कवि के भीतर कवि से बडी भी शक्ति होती है, जो अपना कार्य करती है। यह सत्ता क्या है? यह जिज्ञासा और विस्मय कवि को भी होता है और होता रहता है। मानव से अधिक सामर्थ्यवान् परब्रह्म से नीचे, दिव्य किन्तु ईश्वर से कम सत्ता को ही यज्ञ कहा गया है। चमत्कारी योग उत्पन्न करने वाली प्रतिभा का उन्मेष ही रचना के लिए महत्वपूर्ण है। इतना की प्रतिभा उन्मेष के सामने पूर्वग्रह से मुक्त करने वाले गुरू की भी उस समय आवश्यकता नहीं रहती। उन्मेष का क्षण ही ऐसा होता है कि उसमें सृजन की क्रिया में तीव्रता आ जाती है, आयास ही आवश्यकता नहीं रह जाती।

कवि प्रतिभा की नयी व्याख्या करते हुए अज्ञेय ने उसे प्रौढ़ और कच्ची के भिन्न नामों से अभिहित किया है, उनकी दृष्टि में प्रौढ़ और कच्ची कवि–प्रतिभा का अन्तर कवियों के व्यक्तित्व के अनुपात में निहित नही है, इनमें नही है कि किसका व्यक्तित्व कितना बड़ा अथवा कितना आकर्षक है, कौन अधिक रोचक है अथवा किसके पास अधिक संदेश है। वास्वतिक अन्तर की पहचान यह है कि कौन सा कवि–मानस किसी विशेष अथवा परस्पर भिन्न उड़ती हुई अनुभूतियों के मिश्रण और संयोग तथा चिरनूतन संगम के लिए अधिक परिष्कृत एवं ग्रहणशील माध्यम है। सच तो यह है कि जितना ही महान कलाकार होगा उतनी ही उसकी माध्यमिकता परिष्कृत होगी।

इस प्रकार अज्ञेय प्रौढ़ कवित्व के लिए तीन बातों पर विशेष बल देते हैं–(क) अनुभूतियों के मिश्रण, संयोग एवं चिरनूतन संगम, (ख) कवि मानस की परिष्कृति (ग) कवि–मानस की ग्रहणशीलता। यही तीन बातें भारती चिन्तन की मूल सूत्र हैं।

**eISSN 2581-8996**
[Date]
**THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)**
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 1, Issue 01, Jan 2018

रचना प्रक्रिया के अर्न्तगत अज्ञेय के अनुसार दो बातें महत्वपूर्ण हैं। पहली कलात्मक, अनुभूति या संवेदना की और दूसरी उसके प्रति उस तटस्थ भाव की अपेक्षा की जाती है, जो उसे सम्प्रेष्य बना सके। कलाकार से अपेक्षा की जाती है कि वह व्यक्तिगत अनुभूति–अपने सुख–दुःख को कलाकृति में इस प्रकार प्रस्तुत करे कि उससे उसका व्यक्तिगत सम्बन्ध या लगाव प्रतीत न हो, बल्कि वह साधारणीकृत होकर सामाजिक ग्राह्य बनकर उपस्थित हो। अनुभूति को सम्प्रेष्य अथवा अन्य ग्राह्य बनाकर उसे साधारण या सामान्य संवेदनीय बना देने में ही कृतिकार का अपनी अनुभूति से अपने को अलग करना सिद्ध होता है। अपने को अलग करने की इस अनवरत् प्रक्रिया से ही वह देख पाता है कि वह अनुभूति देय भी है या नही, साधारण भी हो सकती है या नहीं। इसी प्रकार तो वह द्रष्टा है और उसी से वह भावक अथवा ग्राह की दया और करूणा की क्षमता बढ़ाता है, समाज को अन्तः समृद्धि प्रदान करता है।

अनुभूति के विषय में अज्ञेय ने जिस क्षण सिद्धान्त को प्रस्तुत किया है, उसे समझने में गलती करके कभी–कभी उन्हें क्षणवादी कहा गया है। अज्ञेय के लिए उसका अर्थ क्षणिकता नहीं, अनुभूति की प्राथमिकता है।

सहृदय के आस्वाद विषयक धारणा के सम्बन्ध में अज्ञेय का कहना है– 'मेरा चेतन मन जितना ही दूसरो को वह' करके पहचानता है, उतना ही 'मै' अधिक हो जाता हूँ मेरी जानकारी विषयीगत हो जाती है। यानि रियलिटी को मेरी पकड़ उतनी ही सब्जेक्टिव हो जाती है। सत् को पहचानने के लिए ही निरे चेतन को थोडा स्थगन नहीं हो, तो अचेतन का सहयोग आवश्यक है, उसी में से जो आता है, वह विषयी से असंकरित या स्वल्प संकरित–रिएलिटी है, शुद्ध–शुद्धतर ममेतर तत् है, जिसके लिए तत् सत् कहा जा सकता है; क्योंकि उसकी सत्ता मेरी तदीय चेतना से स्वतन्त्र है।

अज्ञेय का यह कथन स्पष्ट रूप से इस बात का घोतक है कि वे इलिवट के निवैयत्विकता का सिद्धान्त भारतीय सिद्धान्त की अनुकूलता में होने पर ही अज्ञेय के लिए स्वीकार्य है। उन्होंने कविता का स्वरूप निरूपित करते हुए कहा है कि कविता सागर के पास तक बढ़ा हुआ वह हाथ है, जिसकी अचूक पकड़ अपनी ओर खीच लेती है। रचना प्रसंग में आत्मा का सत्य व्यक्तिसत्य या आत्माभिव्यक्ति जैसे शब्दों को स्वीकार करते हुए भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि प्रेषणीयता अब भी बुनियादी साहित्यिक मूल्य है और सम्प्रेषण साहित्यकार का बुनियादी काम। इस सम्प्रेषण के लिए सम्प्रेष्य, सम्प्रेषणीय और उसका माध्यम क्या हो, इस पर विचार करने पर मुख्य रूप

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 1, Issue 01, Jan 2018

से पाठकवर्ग रागतत्व और भाषा विवेक, तीन आधार बिन्दु सामने आते है। सम्प्रेषण के सम्बन्ध में अज्ञेय की मान्यता है कि वह लेखक का दूसरे के भीतर पैठकर दूसरे को अपने भीतर पैठने देता है। रागतत्व के सम्बन्ध में वे मानते है कि राग–सम्बन्ध अनिवार्यतया साहित्य का क्षेत्र है। सच तो यह है कि अज्ञेय न तो रागात्मक तत्व को आत्यन्तिक रूप में स्वीकार करते हैं और न बुद्धि को ही अस्वीकार करते हैं। उनके अनुसार यह कहना ठीक नहीं है कि इस अन्वेषण से रागात्मक सम्बन्ध की स्थापना नहीं हो सकती, बल्कि यह भी सोचना चाहिए कि सूक्ष्म और स्थूल के सम्बन्ध के ऐसे अन्वेषण के बिना यह निरवैयक्तीकरण हो कैसे सकता है। इसी प्रकार भाषा से सम्बन्ध में उनकी मान्यता है कि व्यवहार के माध्यम के रूप में भाषा के लिए अनिवार्य है कि वह एक से अधिक के लिए बोधगम्य हो; क्योंकि भाषा जीवन की अभिव्यक्ति है। जीवन की जटिलता के साथ अभिव्यक्ति की जटिलता भी सहज सम्भाव्य है। ऐसी दशा में भाषा अलौकिक या दीक्षागम्य हो जाती है, भले ही वह उसकी शक्ति नहीं, उसका आपद्धर्म हैं वे आगे कहते है कि कविता शब्द में होती है, विचार भाषा में होता है.....वे विचार से आरम्भ करते है, इसलिए वे भाषा से आरम्भ करते हैः विचार का सम्प्रेषण गद्य में भी हो सकता है, इसलिए अपने विचार को काव्य ओढ़ने के लिए भाषा को कुछ ओढ़ते है, उसे कसते है, उसे रंगत देते है; हर हालात में भाषा में कुछ जोड़ते है; भाषा उनके लिए पहले से ही दी हुयी चीज होती है और अन्त तक दी हुई चीज होती है और अन्त तक दी हुई चीज बनी रहती है। पर कविता जोड़कर नही बनती, वह रची जाती है, उसका प्रतिज्ञात या 'जीव' भाषा नही, केवल शब्द है।

इस प्रकार की अज्ञेय की रचना प्रक्रिया में प्रतिभा, व्यूत्पत्ति और अभ्यास के साथ प्रस्वर संवदेना और कल्पना का प्रमुख हाथ है। उनकी सम्प्रेषणीयता सहृदय के लिए सर्जक की भॉति ही भोग्य है। सामाजिक के भीतर तर प्रविष्ट होकर रागात्मक अनुभूतियों को भाषा और शब्दों के माध्यम में सार्वजनिक रूप देना उनकी सर्जन का महत्वपूर्ण बिन्दु है। उन्होनें व्यक्ति, समाज और अभिव्यक्ति को एक नया रूप देकर ग्रहीता के प्रति सम्प्रेषित किया है। उनका यही समस्याओं का विविध आयामी पुंज उनकी कला–सर्जन की विविधता में एकता का प्रतीक हैं। उनकी सर्जक दृष्टि न तो अकेले विदेशी है और न ही अकेले भारतीय। अपितु दोनों के समिश्रित सामअरब का एक मिला–जुला रूप ही उनकी सर्जन का आधार–बिन्दु है।